ISSN 2394-5303

Printing Area®

Peer reviewed Research Journal

Issue-83, Vol-03, December 2021

Editor
Dr.Bapu G.Gholap

14) 21st Century Job Opportunities & Challenges in Higher Education
Mrs. Sanjeeta Shrivastava & Dr. Pragya sharma, Bhopal ||67

15) Value education
P. Soosai & Dr. Meera Bansal, Bhopal ||70

16) Dietary Diversity and Food Security
Dr. Wanjari Manisha Pandurang, Khultabad ||75

17) AGRICULTURAL DEVELOPMENTAND INCLUSIVE GROWTH IN INDIA
Dr. Kuldip Narayan Patil, Dist.-Sangli ||77

18) भारताचे खाद्यतेलाचे परावलंबन
प्रा.डॉ.मीनाताई बोमळे, जि.लातूर ||84

19) नारायण सुर्वेंच्या कवितेतील मानवतावादाची उपासना
श्रीमती चव्हाण उज्वला घोंडीराम, जि. लातूर ||86

20) हिंगोली जिल्ह्यातील इंदिरा आवास योजनेचा चिकित्सक अभ्यास
लोंढे परमेश्वर शिवाजी, नांदेड ||89

21) भीष्म : महाभारतातील महानायक
डॉ. यशवंत राऊत & श्री. अमर विलास कांबळे, धारवाड ||91

22) दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि और स्वरूप
संतोष नागरे, जि.बीड ||93

23) पूर्व–मध्यकालीन शिक्षा के प्रमुख केन्द्र एवं इनकी व्यवस्था
महीप कुमार मीणा, जयपुर ||95

24) ब्यावर का व्यापारिक केन्द्र के रूप में उद्भव
देवेन्द्र सिंह सोमावत, जयपुर ||100

25) १९वीं सदी (पूर्वार्द्ध) में मारवाड़ में नाथों का सामाजिक जीवन
दिवंकल शर्मा, चूरू ||105

26) संस्कृत साहित्य में नारी की स्थिति
डा० निहारिका चतुर्वेदी, फिरोजाबाद ||108

www.vidyawarta.com/03 | http://www.printingarea.blogspot.com

22

दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि और स्वरुप

संतोष नागरे
सहा.प्रा.-हिंदी विभाग,
र.भ. अट्टल महाविद्यालय,गेवराई, जि.बीड

दलित साहित्य मुक्ति की कामना का साहित्य है। डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर के सामाजिक पुर्नरचना सम्बन्धी विचार दलित साहित्यान्दोलन का मूल है। असमानता पर आधारित वर्ण व्यवस्था का विरोध करते हुए मानवीय समता और गौरव प्रतिष्ठा के लिए संघर्ष करना दलित साहित्य की रीढ है। समाज की इन परिवर्तनशील स्थितियों में दलित वर्ग यह आशा कर रहा है कि उसके जीवन पर छाई हुई सदियों पुरानी काली छाया दूर होगी और वह भी नई भोर के सूर्य के देख सकेगा।

दलित साहित्य से तात्पर्य :-

दलित शब्द का अर्थ है - "जिसका दलन और दमन किया गया है, दबाया गया है, उत्पीडित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, विनिष्ट मर्दित, पस्तहिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि। अगर स्पष्टत: कहा जाए तो वर्णव्यवस्था ने जिसे अछूत या अन्त्यज की श्रेणी में रखा।" माता प्रसाद 'दलित साहित्य की प्रमुख रचनाएँ' नामक लेख में दलित की परिभाषा इसप्रकार करते है, - " दबाया गया, गिराया गया, अलग किया गया, उपेक्षित, उत्पीडित, बहिष्कृत, अपमानित और शोषित समुदाय आते है, उनमें जहाँ अनुसूचित जाति, अनुसूचित जन जाति, घुमंतु जातियाँ, बंधुआ मजदूर, झोपडपट्टियों में रहकर नारकीय जीवन जीनेवाले भी आते है।" क्योंकि दलित शब्द के मूल में केवल अस्पृश्यता, घृणा और अपमान ही सम्मिलित नही है, केवल धार्मिक आधार से पीडित लोग ही इस श्रेणी में नही आते अपितु ऐसे भी लोग आते है जिनको कई दो नहीं अनेक पीढियों तक सामाजिक और धार्मिक समानता प्राप्त नही रही अपितु जो अधिक शोषण के भी शिकार रहे है । इन सभी व्दारा रचित साहित्य ही दलित साहित्य है। इस सन्दर्भ में जयप्रकाश कर्दम कहते है, - "दलित लेखकों व्दारा लिखित दलित चेतनोन्मुख साहित्य ही दलित साहित्य है।"

दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि :-

असमानतोय वर्णव्यवस्था के विरुध्द आवाज उठाने का काम गौतम बुध्द के बाद मध्ययुग में संतो ने किया। संत कबीर, संत रैदास ने अपने साहित्य के माध्यम से परम्परागत मान्यताओं, पाखण्ड, जाति, पाँति, वर्णभेद आदि पर प्रहार किया। संतो ने 'कागद की लेखी' की अपेक्षा 'आँखन देखी' पर जोर दिया। संतो के इस मुक्ति संग्राम को आगे बढाने का काम महात्मा फुले, राजर्षि शाहू महाराज एवं डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर आदि समाज सुधारकों ने किया। डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर की विचारधारा ही दलित साहित्य का आधार है। दलितों की दुर्दशा का मूल कारण अज्ञान है। इस दुर्दशा से बचाने के लिए अम्बेडकर 'शिक्षा', 'संगठन' एवं 'संघर्ष' का मार्ग दिखाते है। डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर ने मनुष्य - मनुष्य के बीच भेदभाव करनेवाली वर्णव्यवस्था पर प्रहार किया है। मनुष्य जन्म से नही अपने कर्म से महान होता है। मनुष्य में देवत्व या दानवत्व का आरोपण और बोध इस साहित्य की दृष्टि में अस्वीकार्य है। सीधे - सीधे कहे तो मनुष्य की मुक्ति दलित साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग है। इस प्रकार मनुष्य को मनुष्य ही मानकर चलने से मनुष्य का उध्दार हो सकता है। यह दलित साहित्य के संदेश का प्राण तत्व है।

मनुष्य के साथ जानवर जैसा व्यवहार करनेवाले धर्म पर प्रहार करते हुए डॉ.बाबासाहेब अम्बेडकर ने ३० मई, १९३० को मुम्बई में कहा था - "जो धर्म एक को ज्ञानी बनाकर दूसरे को अज्ञानी रखे, वह धर्म नहीं बल्कि लोगों को बौध्दिक गुलाम बनाकर रखनेवाला मंदिर रुपी जेलखाना है। जो धर्म एक के हाथ में शस्त्र देता है और दूसरे को निशस्त्र करने का अधिकार देता है, वह धर्म न होकर परतंत्रता की बेडी है। जो धर्म कुछ लोगों को अपने जीविकोपार्जन लिए दूसरों पर निर्भर रहने का आदेश देता है, वह सबका धर्म न होकर कुछ स्वार्थियों का धर्म है। " धर्म का मूलाधार मानवता है। मगर यही धर्म जब मानव के साथ अमानवीय व्यवहार करने लगता है तब संगठित होकर मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष करना अनिवार्य है। दलित साहित्य मानवीय अधिकारों की बात करता है। "दलित साहित्य का उद्देश्य समुदाय में जागृति पैदा करके उनमें स्वाभिमान भरना और अपने ऊपर होनेवाले अन्यायों के विरुध्द संघर्ष को सजग करना है।" समाज में क्रियाशीलता की प्रेरणा भरना भी दलित साहित्य का प्रमुख उद्देश्य है। सामाजिक क्रियाशीलता की प्रेरणा का स्फुरण और विकास सुनिश्चित आधारों पर करने का दायित्व भी दलित साहित्य निभाता है। एक प्रकार से देखे तो दलित साहित्य समाज को जगानेवाला साहित्य भी है।

दलित साहित्य का स्वरुप :-

दलित साहित्य मुक्ति की कामना का साहित्य है। भारतीय समाज की वर्णव्यवस्था की पक्षधरता के प्रति अस्वीकार दलित साहित्य का प्रमुख उद्देश्य है। अब तक का अधिकांश साहित्य येन - केन प्रकारेण इस वर्णव्यवस्था का व्याख्याता और पोषक रहा है। इस साहित्य के सापेक्ष दलित साहित्य अपनी पूरी शक्ति और सजगता के साथ इस स्थिति में परिवर्तन का पक्षधर है। वर्तमान समय में रचित दलित साहित्य वर्णव्यवस्था व जातिव्यवस्था का खण्डन करके समता का समर्थन करता है। इसके साथ - साथ सामाजिक ढाँचे में परिवर्तन लाने की माँग भी करता है। ओमप्रकाश वाल्मीकि का कहना है - "दलित पीड़ा, व्यथा, शोषण का विवरण देना या बखान करना ही दलित साहित्य नहीं है न ही यह दलित पीड़ा का भावुक और अश्रुविगलित ऐसा वर्णन ही है, जो मौलिक चेतना से विहीन हो। चेतना का सीधा सम्बन्ध दृष्टि से होता है, जो दलितों की सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक भूमिका की छवि के तिलस्म को तोड़ता है - यह है दलित चेतना।" दलित चेतना और मार्क्सवादी चेतना का लक्ष्य वर्णविहीन, वर्गविहीन समाज रचना की स्थापना होते हुए भी दोनों के मार्ग अलग-अलग है। डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे इस संदर्भ में ठीक ही कहते है, - "दलित चेतना और मार्क्सवादी चेतना में एक मूलभूत और गुणात्मक अंतर है और वह अंतर साधन अर्थात मार्ग से सम्बन्धित है। दोनों का लक्ष्य एक ही है, वर्णविहीन, वर्गविहीन समाज रचना की स्थापना। परंतु जहाँ मार्क्स हिंसा के मार्ग पर चलने से इन्कार नहीं करते वहीं दलित चेतना हिंसा से परहेज रखती है। हिंसा के स्थान पर 'करुणा', 'शील' पर वह बल देती है। इसलिए जहाँ तक दृष्टि का संबंध है, वह महात्मा गौतम बुद्ध के अधिक निकट है। परंतु मार्क्स से उसकी शत्रुता भी नहीं है।"

दलित साहित्य आयर्थावता का नहीं, सत्य का अन्वेषी साहित्य है। इसमें सत्य की खोज के सारे प्रयत्न खुलकर प्रयोग किये जाते है। ही अन्तर यह है कि इसमें सत्य कल्पनातीत, लोकातीत या लोकोत्तर न होकर जीवन और जगत के भीतर ही स्वीकार किया गया है। दलित साहित्यकार प्रत्येक स्थिति में दलितों की दशा और दुर्दशा का खुला चित्रण करता है। एक अर्थ में यह भी समझा जा सकता है कि दलित साहित्य स्वयं में एक आलोचना पध्दति है। व्यक्ति के दुख - दर्द की अभिव्यक्ति हो तो साहित्य है। दलित साहित्य में दर्द की अनुगूँज है, अत: इसकी तह में उल्लास का सौन्दर्य नहीं अपितु वेदना का ही सौन्दर्य देखा जा सकता है। डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे इस संदर्भ में कहते है, - " दलित चेतना ने पीड़ित, व्यथित, दलित मनुष्य के प्रति सहानुभूति ही नहीं बतलाई है अपितु उनकी वेदना को, पीड़ा को शब्द दिया है। उस वेदना और पीड़ा के उत्स तक पहुँचने का प्रयत्न भी किया है। उस वेदना और पीड़ा के कारणों की खोज करते हुए उनके प्रति आक्रोश व्यक्त किया है और वेदना और पीड़ा पैदा करने वाले कारणों के विरुध्द जिहाद पुकारा है। यही इस दृष्टि की विशेषता है। यह दृष्टि न केवल यथार्थवादी है अपितु धर्मनिरपेक्ष, वैज्ञानिक, तर्कनिष्ठ, कठोर बुध्दिवादी, जनतांत्रिक परंतु गहरी संवेदना से युक्त है। जीवन को समग्रता से स्वीकारने वाली यह दृष्टि राजनीति से परहेज नहीं रखती अपितु मानवीय मूल्यों की स्थापना के लिए जनतांत्रिक व्यवस्था का आग्रह पकड़ती है और इस जनतांत्रिक व्यवस्था में कमजोर तबके के प्रति अपने विशेष दायित्व को स्वीकारती है।" दलित साहित्यकार अपने सदियों के दुख दर्द लोगों के सामने रख रहे है। वह पीड़ा किसी एक व्यक्ति की पीड़ा नहीं है, वह उस पूरे समूह की पीड़ा है, जिसे वह हजारों सालों से जीता चला आ रहा है। इसी कारण दलित साहित्य लोक साहित्य के अधिक निकट है।

स्थानीय अर्थात लोकभाषा की शब्दावली में व्यक्त होना भी दलित साहित्य की अपनी विशेषता है। शिष्ट साहित्य के आडम्बर, कृत्रिम शब्दावली, व्यर्थ की कल्पना उड़ान और रहस्यवाद की खोखली अहमन्यता से दूर सरल, सामान्य और बनावट रहित साहित्य होने के कारण यह लोक साहित्य के निकट पड़ता है। यही कारण है कि दलित साहित्य के मूल्यांकन में विशिष्ट या अभिजात्य साहित्य के मूल्यांकन के उपकरण कारगर नहीं होते। डॉ. एन सिंह स्पष्ट करते है, - "जहाँ तक शिल्पगत कमजोरी का प्रश्न है, चूँकि दलित साहित्य अपने पहले चरण में है, उससे परिपक्व शिल्प की अपेक्षा करना बेमानी होगा। जिन विद्वानों को यह कमजोरी दिखाई पड़ती है, उनका दृष्टिदोष अधिक है। इसका शब्द सौन्दर्य प्रहार में है। सम्मोहन में नहीं .. यह शोषण और अत्याचार के बीच हताश जीवन जीनेवाले को लड़ना सिखाता है। धर्म की भूल-भूलैया से निकालकर शोषण मुक्ति का मार्ग दिखाता है .. यही दलित साहित्य का शिल्प सौन्दर्य है।"

सारांश :-

दलित साहित्यकारों द्वारा लिखित दलित चेतनोन्मुख साहित्य ही दलित साहित्य है। दलित साहित्य दर्द के दस्तावेज है। सदियों से भोग रहे दर्द का बेबाक चित्रण करते हुए दलित साहित्य मानवीय अधिकार की बात करता है, जिसका उद्देश्य है - समतामूलक समाज की स्थापना। कुल मिलाकर दलित साहित्य मानव मुक्ति का साहित्य है।

सन्दर्भ ग्रंथ :-

१. दलित साहित्य की भूमिका : हरपालसिंह अरुष

२. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास - डॉ. सूर्यनारायण रणसुभे

३. दलित विमर्श की भूमिका, कँवल भारती

४. समकालीन हिंदी कविता में चेतना के विविध आयाम - संपा.डॉ. रजनी शिखरे, संतोष नागरे

५. आजकल : अगस्त - २००१

६. अस्मितादर्श : वार्षिक विशेषांक - २००१